**दया सद्गुण**

भगवद गीता, १६ अध्याय (श्लोक २) में **दया** को दैवी गुण बताया गया है | **दया** का अर्थ है - किसी को भी दुखी या मुश्किल अवस्था में जानकार, उनके दुःख कम कर पाने का भाव (इच्छा), उनकी मदद करने का भाव, उनका हित करने का भाव; हो सके तो सच्चे मन से उनकी मदद कर पाना और अगर मदद नहीं कर सकते, तो इश्वर से उनके लिए प्रार्थना करना |

दया की भावना हम में है, इस के **पांच प्रमाण** हैं –

* दूसरों के दुःख (पारिवारिक, सामाजिक, धनिक इत्यादि) को और उसके प्रभाव को समझ पाना (empathy)
* धैर्य से दूसरों के दुःख और परिस्थिति की बात (जब वे बताएं) सुन पाने की क्षमता होना (ability to patiently listen to other’s problems)
* दुखी की सहायता करने की सत्य निष्काम इच्छा होना (willingness to help without expectations)
* यदि हम दया की भावना (और कर्त्तव्य की दृष्टि) से किसी की सहायता करने का सोचें या सहायता करें, तो हम धर्म (इश्वर) को बीच में रखकर ही आगे बढ़ें (stick to principle; have emotion, don’t be emotional)
* इश्वर से प्रार्थना सदा बानी रहे की दीनों के दुःख दूर करें और हमारी अपने दोषों पर से भी दृष्टि न हटे

**दया दैवी गुण में स्थापित होने के लिए मानसिक और शारीरिक अभ्यास की आवश्यकता होती है** | यह इसलिए है की हमारे पुराने संस्कारों के प्रभाव से अलग होकर ही हम किसी भी दैवी गुण को अपना सकते हैं | यदि यह दैवी गुण हम में प्रज्यलित हो गए, तो हमारे पुराने संस्कारों का प्रभाव हमारे दैनिक कार्यों पर नहीं होगा |

**दया के लिए अपैशुनम् और क्षमा की भावना होनी अति आवश्यक है** वरन हो सकता है की हम व्यक्ति या परिस्थिति में दोष दर्शन करें और यदि सहायता भी करें तो सकाम और पीछा छुड़ाने की दृष्टि से करें | दया की भावना एक दृष्टि से विनम्रता का भी संकेत है | दया की भावना सब प्राणियों के लिए एक सी होनी चाहिए - सामान्य जन, पशु, रिश्तेदार (चाहे रिश्ते अच्छे हों या बुरे - बिना बदले की भावना के) इत्यादि | शास्त्र में ऐसी अनेक कथाएं (उदहारण) हैं जो हमें इस बात का ज्ञान देते हैं की दया अपने प्रगति के लिए अत्यंत आवश्यक है |

**संत सूरदास जी के इश्वर भजन में से कुछ पंक्तियाँ हैं -**

***राई जितनी सेवा को मानत मेरु सामान, समुझि दास अपराध सिन्दु सम एको बूँद न मान***

***अर्थात "ईश्वर हमारी एक चावल के दाने जितनी सेवा को सुमेरु पर्वत जितना विशाल मान लेते हैं परन्तु हमारे सागर जैसे विशाल अपराधों को एक बूँद भी नहीं मानते"***

यह सत्य है की हर मनुष्य अपने कृत कर्मों के फल ही भोगता है (प्रारब्ध), किन्तु ईश्वर दयालु न हों तो, हमारे सारे दुःख एक साथ हमारे जीवन में आ जाएँ और हाहाकार मचा दें |

**श्रीरामचरितमानस के सुन्दर काण्ड में श्री राम जी के वचन हैं –**

***जौं नर होइ चराचर द्रोही, आवे सभय सरन ताकि मोहि | तजि मद मोह कपट छल नाना, कराऊँ सद्द तेहि साधू समान |***

***अर्थात “कोई मनुष्य सम्पूर्ण जड़ चेतन से जगत का द्रोही हो, यदि वह भी भयभीत होकर मेरी शरण तक कर आ जाए और मद, मोह तथा नाना प्रकार के छल-कपट त्याग दे, तो मैं उसे बहुत शीघ्र साधू के सामान कर देता हूँ |”***

जब ईश्वर इतने दयालु हैं, तो हम तो उनके सौम्य रूप हैं, हमें भी ईश्वर से प्रेरणा लेकर उनके जैसा बनने की चेष्टा करनी होगी |